परम संत बाबा देवी साहब

परम संत बाबा देवी साहब का जन्म मार्च १८४१ ई० में एक प्रतिष्ठित कायस्थ कुल में हुआ था। इनके पिता श्रीमहेश्वरी लाल जी हाथरस तहसील (जिला अलीगढ़) के कानूनगोई में काम करते थे और संत तुलसी साहब के शिष्य थे।

श्रीमहेश्वरी लालजी के कई संताने शैशवास्था में ही कालकल्वित हो गईं। इसीलिए वे दुखी रहा करते थे। एक दिन संत तुलसी साहब इनके घर आए और आशीर्वाद देते हुए कहा कि चिन्ता न करो, इस वर्ष तेरे घर पवित्र आत्मा तेजस्वी बालक ने जन्म लिया है। पुरोहित ने जन्म कुण्डली बनाई और कहा - 'यह बालक बड़ा प्रतापी होगा। हिन्दू ही नहीं, अनेक धर्मों के लोग इसका सम्मान और यशोगान करेंगें।' बालक का नाम देवी प्रसाद' रखा गया। इस बीच तुलसी साहब बाहर भ्रमण कर रहे थे।

तुलसी साहब हाथरस लौटे तो मुंशीजी बच्चे को उनसे आशीर्वाद दिलाने उनकी कुटिया पर आए। तुलसी साहब बच्चे के सिर पर हाथ रखकर प्रसन्नतापूर्वक आशीष देते हुए कहा - 'यह सोए हुए भारत वर्ष में जागृति पैदा करेगा।' बाबा देवी साहब बचपन से ही सच्चे, सरल और निर्भीक थे। खेल-कूद की अपेक्षा ये आध्यात्मिक क्रिया-कलापों में अधिक रूचि लेते थे। सत्संग सुनना और ध्यान करना इन्हें अच्छा लगता था। छः वर्ष की अवस्था में इनकी पढ़ाई की व्यवस्था की गई। ये अपना सबक मिनटों में निबटाकर विचार मग्न हो जाया करते थे। एक दिन अध्यापक ने पूछा- 'तू खाली बैठकर क्या सोचा करते हो?' इन्होने संकोच के साथ उत्तर दिया - सोचता हूँ यह संसार किसने उत्पन्न किया और क्यो? इसमें जीवन कहाँ से आता है और कहाँ चला जाता है?' अध्यापक इनके प्रश्नों से विस्मित हो गए।

एक बार वे लोगों के साथ देवी स्थान गए। वहाँ बँधे हुए बकरे और नंगी तलवार को देखकर ये बेहोश हो गए। जब इन्हें होश आए तो किसी ने इनके कुटुम्बियों से कहा - 'बच्चे का हृदय कच्चा होता है इसे यहाँ नहीं लाना था।' इस पर बाबा साहब ने उत्तर दिया - 'क्या बड़े होकर लोगों का हृदय पत्थर जैसा

कठोर हो जाता है? इन्होने और भी बहुत-सी बाते कही। लोगों पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि बकरे को जीवित ही चढ़ाकर छोड़ दिया।

एक बार इनके चाचा इन्हें साथ लेकर स्वामी दयानन्द जी के दर्शनार्थ गए। स्वामीजी ने बाबा साहब से पूछा- 'तुम किसको मानते हो? इन्होने का-'एक परमेश्वर को।' स्वामीजी- 'वह कैसा है और कहाँ रहता है?' इन्होने उत्तर दिया- 'वह सबसे बड़ा है और सबसे सूक्ष्म भी। वह सबके अन्दर रहता है।' स्वामीजी के कुछ प्रश्नों के भी बाबा ने बड़े ही सटीक उत्तर दिए। स्वामीजी इनके उत्तर से अत्यधिक प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दिया।

जब इनकी आयु चौदह वर्ष की हुई तो इनकी माता का देहावसान हो गया। माता से बिछुड़ने के बाद इनका मन संसार से विरक्त होने लगा। पिता ने समझा-बुझाकर एक अंग्रेजी स्कूल में नामांकन कराया। इनकी स्कूल की शिक्षा समाप्त होते ही इनके पिता भी परलोक वासी हो गए। अब इन्होंने घर-बार त्यागकर वैरागी बननेका निश्चय कर लिया। इनके एक संबंध के भाई श्री पद्मदास जी राधास्वामी मत के सत्संगी थे। वे इन्हें राधास्वामी मत के द्वितीय आचार्य रायबहादुर शालग्रामजी के पास ले गए जो उस समय पोस्टमास्टर जनरल के पद पर थे। रायसाहब ने समझाया कि भिक्षा माँगकर साधु-जीवन बिताना कष्टकर है। मैं तुम्हें पोस्ट ऑफिस में नौकरी लगा देता हूँ और तुम यहीं सत्संग भजन करो। तीस रूपये महीने पर इनकी नौकरी लग गई। घरवालों के आग्रह पर भी इन्होने गृहस्थी नहीं बसाई। ये नौकरी के दायित्वों को संभालने के साथ-साथ अपने भोजन आदि की व्यवस्था करते और भगवत भजन में लीन रहते। वहाँ एक प्रेमी सज्जन साहुवंशीधर के यहाँ इनका निवास था। इन्होने अपनी तीस वर्षों की नौकरी से उपार्जित धन वंशीधर जी को दे दिया। वंशीधर जी ने उस धन को अपने व्यापार में लबाकर बाबा साहब को तीन रूपये महीने देने लगे। बाबा साहब ने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और उन्हीं रूपयों से काम चलाते हुए सत्सग ध्यान मे मस्त रहने लगे। सामान्यता ये एक लम्बा काला कुर्त्ता पहनते थे।

जैसे-जैसे इनकी साधना परिपक्व होती गई इनका यश भी दूर-दूर फैलने लगा। इनके ज्ञान से प्रभावित होकर बुद्धिजीवी लोग इनकी सेवा में पहुँचने लगे। ये सत्संग में संतमत के अनेक विषयों पर प्रकाश डाला करते थे। यथा-सदाचार, कर्मफल, आवागमन, पिण्ड-ब्राह्माण्ड, ईश्वर-स्वरूप, अन्तर्ज्योति, अन्तर्नाद, मोक्ष आदि।

२६ फरवरी १८८६ ई. को इन्होंने अपने दो सहयोगियों-मुंशी रघुवरदयाल और बलदेव कहार को साथ लेकर धर्म-प्रचार के लिए यात्रा आरंभ की। लखनऊ, बनारस, डुमराँव, बक्सर, बाँकीपुर, जमालपुर, मुंगेर, भागलपुर आदि स्थानों की यात्रा करके इन्होंने अध्यात्म-विषयक व्याख्यान दिए। ये अपने उपदेश में झूठ, चोरी, नशा, हिंसा, व्यभिचार; इन पाँच पापों के तयाग के साथ परोपकार, स्वावलम्बी जीवन, सत्संग-ध्यान आदि विषयों पर जोर दिया करते थे। इन्होंने मोक्ष प्राप्ति के लिए दो मार्ग आवश्यक बतलाए - दृष्टि-मार्ग और शब्द मार्ग।

१९०९ ई० में भागलपुर के मायागंज में महर्षि मँहीँ महाराज को इनके प्रथम शुभ दर्शन हुए। योग्य शिष्य पाकर बाबा साहब ने इनके अन्दर ज्ञान की सम्पूर्णता भर दी। आगे चलकर ये ही बाबा साहब के प्रधान शिष्य होने का गौरव प्राप्त करते हुए संतमत के प्रमुख स्तंभ बने।

बिहार और उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त बाबा साहब ने पटियाला, जालंधर, लाहौर, गुजराँवाला, जम्मू-कश्मीर, रावलपिण्डी, झेलम आदि स्थानों की यात्रा की। ये जहाँ भी जाते इनकी वाणी से लोग बहुत प्रभावित होते अनेक स्थानों पर लोगों के शारीरिक और मानसिक कष्टों को अपनी सिद्धि बल से दूर किया। जम्मू-कश्मीर के महाराज सर प्रताप सिंह बहादुको भी बाबा साहब का सत्संग और सान्निध्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस प्रकार इनका सत्संग प्रचार-कार्यक्रम लगभग १९१६ ई० तक अनवरत रूप से चलता रहा तत्पश्चात् इन्होंने मुरादाबाद से बाहर जाना छोड़ दिया। अब दूर-दूर से भक्तगण इनके निवास पर आकर इनके दर्शन और सदुपदेशों का लाभ लेते। १९१८ ई० से बाबा साहब प्रायः अन्तर्मुख रहते हुए प्रभु में लीन रहने लगे १५ जनवरी, १९१८ ई० से इनकी अवस्था सर्वथा भिन्न हो गई। इन्होने अन्न त्याग कर मात्र जल लेना शुरू किया और लोगों से वार्तालाप करना छोड़ दिया। अन्ततः १९ जनवरी १९१९ ई० रविवार के दिन संतमत के इन महान ध्वजवाहक ने सदा के लिए लोगों के लिए विदा ले लिया।

अंतकाल निकट जान भक्तों ने कहा हूजूर उपदेश किया जाय-

कहा - **"दुनिया वहम है अभ्यास करो।"**

उपदेश-

१. मिथ्या भाषण, चोरी, धन-संबंधी लूट-खसोट आत्मा के अपावन रोग हैं।

२. संसार और उसके सम्पूर्ण पदार्थ नाशवान है, आवागमन होता है। कब्र और चिता में जाने के पूर्व मोक्ष प्राप्त करो।

३. जीव के उद्धार का मार्ग हर एक मनुष्य के अन्तर में मौजूद है। जब तक इस पर न चलेगा, धर्म और पंथ का असली फल मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकता है।

४. वैदिक धर्मी, मुसलमान, ईसाई कुछ बने रहो, परन्तु दुनिया में दुःख-सुख भोगते हुए अन्तर बिना अभ्यास किए एक दिन भी मत रहो।

५. साधु और संत वे कहलाते है जो दुनिया में सीधी और सलामत रवी की चाल को अख्तियार करते हैं और सुरत अर्थात् ख्याल से ध्यान करने का उपदेश करते हैं।